शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 मार्च 2014

आचार्य कौटिल्य वर्णित दुर्ग व्यवस्था

उमा अरमो, (शोधार्थी)
इतिहास विभाग
शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महिला महाविद्यालय,
जबलपुर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

दुर्ग, किला गढ़, कोट अथवा फोर्ट मूलतः राज्य-शक्ति और स्थापत्य के प्रतीक हैं। दुर्ग निर्माण की कहानी महज ईंटों तथा पत्थरों से बने विशाल महलों की कहानी नहीं अपितु इसके निर्माण की कहानी मानव -सभ्यता के विकास की कहानी है। भारतीय वाङ्मय में दुर्ग निर्माण का लम्बा क्रम है। दुर्गबंदी व्यवस्था की दृष्टिकोण से मौर्य युग प्राचीन भारतीय इतिहास का स्वर्ण -काल था। इस युग में पुष्कलावती, पाटलिपुत्र, गिरिब्रज, काशी और तक्षशिला आदि नगरों की रचना दुर्गबंदी पर आधारित थी। प्राचीन मनीषीयों में आचार्य कौटिल्य ही ऐसे पहले विद्वान हैं जिन्होंने राज्य की सुरक्षा हितों को ध्यान में रखकर रक्षात्मक दुर्गबन्दी हेतु बहुत विस्तृत एवं व्यवस्थित ढंग से मार्गनिर्देशन एवं दिशा निर्देश अपनी कृति अर्थशास्त्र में दिये हैं।

प्रस्तावना-

दुर्ग रचना मानव की सुरक्षा भावना की स्वभाविक प्रवृति के वृहद परिणाम का परिचायक है। युद्ध की आवश्यकता की दृष्टि से राज्य के अन्दर व सीमाओं पर दुर्ग बनवाने का प्रचलन प्राचीनकाल में था। इन्ही दुर्गों में सेना रहती थी जो आक्रमणकारी शत्रु को राज्य में प्रवेश करने से रोकती थी। प्राचीन काल में नगरों को चहारदीवारी और खाइयों से सुरक्षित रखा जाता था। प्राच्य और पाश्चात्य दोनों प्रकार की प्राचीन नगर शैलियों का यह एक सामान्य लक्षण था। विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यताओं सीरीया, कोटदीजी, मुडीगाक, और हडप्पा में दुर्गो के अवशेष पाये गये हैं। हूणों के आक्रमण से रक्षा करने के उद्देश्य से चीन के सम्राट शिन्हुआ ने 228-210 ई.पू. में 2400 किमी लम्बी दीवार अथवा परकाटा बनवाई थी। खुदाई के दौरान हड़प्पा, कालीबंगा, लोथल और बनवाली में भी सुदृढ़ दुर्ग के अवशेष पाये गये है। ऋग्वेद में शतभुज या सौ दीवार वाले दुर्ग, रामायण काल में लंका दुर्ग तथा महाभारत के राजधर्म अध्याय में दुर्ग रचना के अनेक मार्गदर्शी सिद्धान्त बताये गये हैं। मगध, पांचाल, काशी, इन्द्रप्रस्थ आदि दुर्ग नगर थे। मनु और शुक्राचार्य ने दुर्गों का वर्णन किया है।

ई.पू. चैथी शताब्दी में सिकन्दर के आक्रमण के समय भारत में दुर्गों का एक लम्बा क्रम मिलता है। मस्सग, मालव, संगल, पुष्कलावती, तक्षशिला, अंजिरा के दुर्गों को जीतने के लिए सिकंदर को भारी कुर्बानियां देनी पड़ी थी। नंद वंश के बाद

स्थापित मौर्य काल में आचार्य कौटिल्य के मार्ग निर्देशन में राज्य के नगर एवं सीमाओं पर सुदृढ़ किलेबंदी की व्यवस्था की गई।

शोध प्रविधि-

प्रस्तुत शोध पत्र के प्रथम चरण में प्ररस्तावना, कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र में दुर्ग विधान, दुर्ग के प्रकार, किलेबन्दी रचना के अंग का वर्णन किया गया है। अन्तिम चरण में निष्कर्ष है। उक्त शोध पत्र को तैयार करने हेतु पुस्तकालय एवं सर्वेक्षण विधि की मदद ली गई है।

दुर्ग विधान- मूल बात तो यह है कि पूर्व वैदिककालीन बस्तियां शनैः-शनैः विकासोन्मुख होती हुई मौर्यकाल के नगरों के रुप में परिवर्तित हो गयीं, जिनकी सुरक्षा का इस काल में विशेष ध्यान रखा गया। सम्भवतः इसलिए अधिकाँश प्राचीन नगर नदियों के किनारे अथवा पहाड़ियों पर बसाये गये। मैदानी भागों में बसाये गये नगरों की सुरक्षार्थ प्राचीर बनाई गयी। मौर्य युग के पूर्व चाहरदीवारी में धूप व वर्षा से समुचित निदान हेतु काष्ठ का उपयोग होता था। पाटलिपुत्र इसका ज्वलंत प्रमाण है जिसकी चाहरदीवारी काष्ठ द्वारा निर्मित थी।1 परकोटे के सामने 182.87 मीटर चैड़ी और 28.95 मीटर गहरी खाई थी। पाटलिपुत्र के दुर्ग के वैभव का वर्णन मैगस्थनीज ने किया है उनके अनुसार नगर, गंगा और सोन के संगम पर नौ मील लम्बाई और डेढ़ मील चैड़ाई में बसा था इसकी आकृति सामानांतर चतुर्भुज जैसी थी। उसने नगर के चारों तरफ बनी हुयी खाई का वर्णन करते हुए बताया है कि वह लगभग तीस हाथ गहरी और चार सौ हाथ चैड़ी थी जिसमें सोन नदी से जल भरा जाता था।2 चीनी यात्री फाह्यान 400 ई. में पाटलिपुत्र आया था उसने भी नगर के दुर्गों का जिक्र किया था। चन्द्रगुप्त मौर्य के काल में आचार्य कौटिल्य के मार्गदर्शन व दिशा-निर्देशन में पाटलिपुत्र सहित कई दुर्गों की सुदृढ़ किलेबंदी की गई। उन्होंने दुर्ग-रचना के कई मानक बनाये। पाटलिपुत्र, वैषाली, कौशाम्बी, उज्जयिनी और राजगृह में कौटिल्य के मानकों के अनुसार दुर्ग बनाये गये।3 नगर सुरक्षा को दृष्टि में रखते हुए इस काल में दुर्गों के विकास पर भी पर्याप्त बल दिया गया। ऐसा लगता है कि इस काल में कौटिल्य के इस निर्देश का- देश के चारों तरफ सीमाओं पर राजा युद्धोचित प्राकृतिक दुर्गों के निर्माण कराये और देश के बीच में धनवृद्धि के केन्द्र नगरों और राजधानी की स्थापना करें, अक्षरश: पालन किया गया। अश्वकों का मस्सग दुर्ग इसका ज्वलंत उदाहरण है। नगरों की सुरक्षार्थ प्राकार और पारिखा की व्यवस्था के साथ राजा की सुरक्षा के लिए भी सुदृढ़ किले की रचना की जाती थी। मूलतः प्रत्येक नगर एक दुर्ग होता था और प्रत्येक नगर एक दुर्ग।4 दुर्ग की रचना भूमि की दिशा आदि को ध्यान में रखकर की जाती थी। नगर (जनपद की राजधानी) का निर्माण दुर्ग के रुप में ही किया जाता था। राजधानी के अतिरिक्त जनपद की सीमाओं पर भी कई दुर्गों का निर्माण किया जाता था जिनमें स्थापित सेनाऐं अन्तपालों की अधीनता में रहती थी।5 सीमान्त प्रदेश में स्थित दुर्गों की रक्षा का उत्तरदायित्व अन्तपालों का ही माना जाता था। सीमान्त प्रदेश में स्थित इन दुर्गों का प्रयोजन शत्रु के आक्रमण से देश की रक्षा करना होता था। इन्हें ऐसे स्थान पर बनाया जाता था जहां सुरक्षा की प्राकृतिक सुविधायें प्राप्त नहीं होती थी, वहां किलेबन्दी के लिए कृत्रिम उपायों का प्रयोग किया

शब्द–ब्रह्म ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 मार्च 2014

जाता था। किलों की लम्बाई, चैड़ाई और आकार आदि राज्य व नगर की स्थिति एवं आवश्यकतानुसार कम या अधिक हो सकती थी। दुर्ग गोलाकार, आयताकार, अण्डाकार किसी भी प्रकार के हो सकते थे। दुर्ग के भीतर राजधानी का विन्यास होता था, उसमें विभिन्न उपयोगों के लिए बनाई गयीं सड़के विभिन्न व्यवसाय के लोगों के आवास, राजकीय कार्यालय आदि की स्थिति वैज्ञानिक विधि से नियत की जाती थी।

दुर्ग के प्रकार- सुरक्षा की दुष्टि से आवश्यक दुर्गों को कौटिल्य ने मनु की भांति चार भागों में बांटा है6 - 1.औदक दुर्ग 2.पार्वत दुर्ग 3.धान्वन दुर्ग 4.वन दुर्ग औदक दुर्ग- निरन्तर बह रहे पानी से घिरे स्थल पर अथवा चारों ओर पानी से घिरा हुआ टापू के समान अथवा गहरे तालाबों से आवृत स्थल प्रदेश औदक दुर्ग कहलाता है। मनु7 ने इसे जल दुर्ग एवं वाल्मिकि8 ने नादेय दुर्ग कहा है। उदाहरणतः लंका का दुर्ग, श्रीसिंधु दुर्ग, विजय दुर्ग, जंजीरागढ़ दुर्ग, तालबेहट का दुर्ग इस श्रेणी में आते हैं। पार्वत (गिरि) दुर्ग- बड़ी-बड़ी चट्टानों अथवा पर्वत की कन्दराओं के बीच अथवा पहाड़ियों से घिरा दुर्ग पार्वत दुर्ग है। पहाड़ के शिखर, मध्य या ढालू भाग पर स्थित इस गिरि दुर्ग को आचार्य कौटिल्य ने महत्वपूर्ण बताते हुए निर्देश दिया है कि इन दुर्गों में संकट काल से पूर्व ही पर्याप्त मात्रा में शस्त्रास्त्र, रसद एवं अन्य युद्धोपयोगी समान एकत्र कर लेना चाहिये (अर्थ. 2/3)

धान्वन दुर्ग- जल तथा घास आदि से रहित अथवा सर्वथा ऊसर भूमि में निर्मित दुर्ग धान्वन दुर्ग कहलाता है। 9 यह रेगिस्तानी दुर्ग था। भारत के पश्चिमी सीमान्त प्रदेशों में पश्चिमी आक्रमणकारियों से मुकाबला करने के लिए बनाई गयी अधिकांश विशाल एवं अजेय दुर्ग इस श्रेणी में आते हैं।

वन दुर्ग- चारों ओर दलदल अथवा जंगल या कांटेदार सघन झाड़ियों से परिवृर्त दुर्ग वन दुर्ग कहलाता है।(अर्थ. 2/3) उपर्युक्त दुर्गों में आचार्य कौटिल्य ने सामरिक महत्ता की दृष्टि से औदक और पार्वत दुर्ग को सर्वश्रेष्ठ बताया है। धान्वन और वन दुर्ग को वनपालों की सरुक्षा के लिए उपयोगी बताया है। 10

किलेबन्दी रचना के अंग- आचार्य कौटिल्य केवल दुर्ग और उनके प्रकार से ही संतुष्ट नहीं हुए अपितु इन दुर्गों की सुरक्षा पर पर्याप्त ध्यान दिया है। पारिखा, वप्र, प्राकार, अट्टालक, तोरण और द्वार, प्राचीन नगर विन्यास में किलेबन्दी के प्राण-तत्व थे। 11

पारिखा - भूमि-चयन के बाद दुर्ग निर्माण की शुरुआत पारिखा (खाई) खनन से होती थी। प्राचीन वाङ्मय में चतुर्दिक पारिखा होने का उल्लेख है। मेगस्थनीज ने पाटलिपुत्र की 213.35 मीटर चौड़ी और 4.5 मीटर गहरी ईटों से लगी पारिखा का जिक्र किया है।12 अर्थशास्त्र में पारिखा के लिए 14, 12, 10 दंड (25, 6, 22, 18.25 मीटर) का विधान है।13 आचार्य कौटिल्य ने निर्देश दिया है कि किलेबन्दी हेतु दुर्ग के चारों ओर एक-एक दंड (एक दंड=चार हाथ) की दूरी पर जलपूर्ण गहरी और चैड़ी तीन चाईयां खुदवानी चाहिए। जितनी वो चौड़ी हों, उससे आधी गहरी होनी चाहिए। खाईयों की तलहटी बराबर चौरस एवं मजबूत पत्थरों से बंधी हों। उनकी दीवारें पत्थर अथवा ईटों से निर्मित हों।14 अर्थशास्त्र में पारिखा के तोयपूर्णा, सपरिवाहा और पद्मावती के रुप में तीन भेद निर्धारित किये गये हैं।

शब्द-ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 मार्च 2014

वप्र भित्ति (रैम्पर्ट) – अर्थशास्त्र में पारिखा के लिए खनन से निकली मिट्टी से वप्र बनाने का विधान बताया गया है। वप्र के निर्माण के लिए मिट्टी को पारिखा से चार दंड की दूरी पर इकत्रित करने और मिट्टी को हाथियों, बैलों से कुचलवाने तथा वप्र के ऊपर विषैली तथा कंटीली झाड़ियां लगाने का निर्देश है, जिससे शत्रु का प्रवेश निषेध हो जाये। इस प्रकार वप्र 6 दंड ऊंचा तथा 12 दंड चौड़ा होना चाहिए। ये वप्र तीन प्रकार के होते हैं- उर्ध्वच्य, मज्वपृष्ठ और कुभकुक्षिक। ऊंचा वप्र उर्ध्वच्य, मध्यम वप्र मज्वपृष्ठ और अत्यंत मजबूत वप्र कुभकुक्षिक कहलाता है।15 पारिखाओं का खनन एवं वप्र-भू का निर्माण संयुक्त कार्य है। भू-दुर्गों के लिए वप्र अनिवार्य है जितने भी प्राचीन भू-दुर्ग हैं, सबकी वप्र पर ही रचना हुई है। 16

प्राकार- पारिखा से निकली मिट्टी के ढूह पर वप्र और उस पर प्राकार (परकोटा या दीवार) का निर्माण होता था। आचार्य कौटिल्य का अभिमत है कि प्राचीर की चौडाई वप्र के विस्तार से दुगुनी ऊंची हो। कम से कम बारह हाथ से लेकर चौदह, सोलह, अठारह सम संख्याओं में अथवा पन्द्रह, सत्रह आदि विषम संख्याओं में, अधिक से अधिक चौबीस हाथ तक ऊंची होनी चाहिए। प्राकार का उपरी भाग इतना चौड़ा होना चाहिए कि जिस पर एक रथ आसानी से चलाया जा सके।17 लकड़ी का प्राकार कभी भी नहीं बनाना चाहिए। कौटिल्य ने तीन प्रकार के प्राकार बताये हैं- उर्ध्वच्य, मज्वपृष्ठ और कुभकुक्षिक समरांगण। जिसमें प्राकार को 17 हस्त (7.75 मीटर) ऊंचा बनाने का निर्देश है। निचला हिस्सा 12 हस्त (5.5 मीटर) और शिर भाग 1.80 मीटर से पांच मीटर होना चाहिए। अर्थशास्त्र में प्राकारों पर अनेकानेक अस्त्र-शस्त्रों को स्थापित करने का निर्देश दिया गया है, ताकि आपातकाल में उनका प्रयोग किया जा सके।18 पतंजलि के महाभाष्य में पाटलिपुत्र के प्राकारों का जिक्र किया गया है। पुराने राजगिर की बाहरी दीवारें 40 से 48 किमी. लम्बी हैं। प्राकार की दीवारें बड़ी-बड़ी अनगढ़ शिलाओं की बनी हैं। इसकी चिनाई में कोई मसाला नहीं लगा है।

अट्टालक- किलेबन्दी में प्राकारों का एक आवश्यक अंग बुर्ज या अट्टालक है। प्राकारों में जगह-जगह पर अट्टालक बने होते हैं। आचार्य कौटिल्य का मत है कि प्राकार में दो अट्टालकों के बीच 30 दंड (28 मीटर) के अन्तराल में चारों दिशाओं में अट्टालक बनाने चाहिए। ये दुर्ग के माथे के मुकुट की तरह होते हैं। इससे पुर या दुर्ग की शोभा और सुरक्षा बढ़ती है। राजगिर के प्राचीन प्राकार की दृढ़ता के लिए विषम अन्तराल पर ठोस व चौपहलू आकार के 16 बुर्ज हैं। नगर प्राकार में भी व्रत्तार्ध आकार के बुर्ज बने हुए हैं। मेगस्थनिज ने पाटलिपुत्र के प्राकार में 570 अट्टालकों का जिक्र किया है। 19

प्रवेश द्वार- किलेबन्दी का पांचवा अंग तोरण द्वार या प्रवेश द्वार है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दुर्ग के प्रवेश द्वार को गोपुरम कहा गया है। पाटलिपुत्र और राजगिर में 64-64 प्रवेश द्वारों का जिक्र आता है। प्रत्येक दिशा में एक मुख्य द्वार होने का विधान है। गोपुरों की रचना इस प्रकार होती थी कि एक द्वार पार करके दूसरे में प्रवेश करने पर पहले भाग के सभी भवन ओझल हो जाते हैं। सभी गोपुर एक-दूसरे से बड़े लगते हैं। 20

फाटक- कौटिल्य के अर्थशास्त्र में प्रवेश-द्वार के फाटकों को तीन या चार परतों में बनाने का

निर्देश है। कपाटों में लोहे की मोटी-मोटी मेखों या कोणकीलों का विधान है। 21

निष्कर्ष-

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि मौर्य काल में तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार सुरक्षा मानकों का पूर्ण आंकलन कर भौगोलिक बनावट के आधार पर सुदृढ़ किलेबंदी की व्यवस्था की गई, जो मौर्य साम्राज्य की राजनीतिक स्थिरता, कुशल प्रशासन, शान्ति एवं सुरक्षा की बुनियाद बनी। भारत के पश्चिमी सीमान्त के द्वारा सिकन्दर के सफल आक्रमण के बाद उपस्थित सुरक्षा खतरों को दृष्टिगत रखते हुए आचार्य कौटिल्य इस तथ्य को भलीभांति जानते एवं समझते थे कि सेना एवं सुरक्षा व्यवस्थाओं को मजबूत किये बिना दीर्घकाल तक शासन नहीं किया जा सकता और न ही बाहृय आक्रमणकारियों का मुकाबला किया जा सकता है। तत्कालीन समय में दुर्ग सुरक्षा व्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार था जहां सैन्य आवश्यकता की सभी वस्तुऐं उपल्बध होती थी। जिसे आधुनिक युग के सैन्य आपूर्ति अड्डे के रुप में चिन्हित किया जा सकता है। द्वितीय विश्व युद्ध के समय जर्मनी के भीषण आक्रमण को रोकने व उसका मुकाबला करने के लिए अपनी विशाल भौगोलिक विस्तार एवं सीमित सैन्य शक्ति को सभी स्थानों में फैलाकर लड़ने के बजाये सोवियत संघ ने जालीय समरतंत्र नामक सामरिकी का प्रयोग किया था जिसमें प्रयुक्त आधार स्थान सभी सैन्य जरुरतों से पूर्ण एक दुर्ग के रुप में थे। हांलाकि उक्त आधार स्थान दुर्ग के समान स्थिर नहीं होते थे परन्तु उनका कार्य भी दुर्ग के समान था। आचार्य कौटिल्य के दुर्गबंदी की प्रासंगिकता इस युग में भी है परन्तु आधुनिक विज्ञान एवं तकनीकि विकास एवं सैन्य आवश्यकताओं के मद्देनजर दुर्ग सैनिक चौकी, प्रमुख सैन्य अड्डे, सैन्य कमान में तब्दील हो गये है। सुदृढ़ किलेबंदी, कुशल प्रशासन, श्रेष्ठ राजनीतिक नेतृत्व एवं मजबूत सेना के द्वारा ही मौर्य साम्राज्य का वृहद विस्तार एवं राज्य का सफल संचालन सम्भव हो सका। आचार्य कौटिल्य के अनुसार शास्त्र, और शान्ति की रक्षा के लिए सेना तथा सेना की सुदृढता के लिए दुर्ग आवश्यक है। आचार्य कौटिल्य के दिशा निर्देश कालान्तर में पूर्ववर्ती राज्य व्यवस्थाओं के लिए प्रेरणा एवं मार्गदर्शी सिद्धांत साबित हुआ। जिसके फलस्वरुप भारतीय वाङ्मय में एक से बढ़कर एक विशाल व अभेद्य दुर्गों का निर्माण हुआ। मराठा शासक वीर शिवाजी ने अकेले महाराष्ट्र के अन्दर 180 से अधिक छोटे-बड़े दुर्गों का निर्माण कराया। निःसन्देह कौटिल्यकालीन किलेबंदी व्यवस्था उत्तरकालीन शासन पीढ़ीयों के लिए प्रेरणा स्रोत रहे।

संदर्भ

1.सिंह, लल्लनजी -कौटिल्य का युद्ध दर्शन, संस्करण-2000, प्रकाश बुक डिपो बरेली, पृष्ठ-165

2.सिंह, लल्लनजी -भारतीय सैन्य इतिहास, संस्करण-1980, प्रकाश बुक डिपो बरेली, पृष्ठ 72-73

3.दुबे, दीनानाथ, भारत के दुर्ग, संस्करण- 1999, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली, पृष्ठ-01 4.मनुस्मृति, 9/294

5.कौटिल्य अर्थशास्त्र, 2/1

6.कौटिल्य अर्थशास्त्र, 2/3

7.मनुस्मृति, 7/70-71

8.वाल्मीकि रामायण, युद्धकाण्ड, 3/21

9.कौटिल्य अर्थशास्त्र, 2/31

10.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.1, पृष्ठ-167

11.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.3, पृष्ठ-27

12.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.3, पृष्ठ-28
13.चतुर्दश द्वादश दशेती विस्तीर्णा, विस्तारा दवगाधाः पदोनमर्ध वा त्रिभागमूला मूले चतुरश्रा पाषाणोपहिताः पाषाणेष्टाकाबद्धा पायवां वा तोयान्तिकी रागन्तुतोयपूर्णा वा सपरिवाहाः पद्यग्राहवंती। अर्थशास्त्र: कौटिल्य
14.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.1, पृष्ठ-167
15.कौटिल्य अर्थशास्त्र 3/105
16.शुक्ल, द्विजेंदनाथ- वास्तुविद्या, पृष्ठ- 187
17.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.1, पृष्ठ-168
18.ताषु पाषाण कुद्दाल कुठारी कांडकल्पनाः। मुसृष्ठिमुगदरां दंडचक्र यंत्र-षतघ्नयः।। अर्थशास्त्र: कौटिल्य
19.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.3, पृष्ठ-30
20.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.3, पृष्ठ-31
21.पूर्वोक्त संदर्भ क्र.3, पृष्ठ-31